स्त्री की संवेदना से चिंतित समकालीन कविता

डॉ0 श्रवण कुमार
सहायक अध्यापक (एल0टी0 हिन्दी) राजकीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, मुसासू पौडी गढवाल

सारांश

संसार भर के साहित्य में स्त्री के बारे में इतना लिखा गया है कि शब्द कम पड गए। दुनिया की प्रत्येक सभ्यता और संस्कृति ने स्त्री पर अगाध सृजन किया है। स्त्री के इतने प्रतिरूप, इतनी छवियां रची गईं की इनकी माया में स्त्री का वास्तविक आकार ही धुंधला पड गया। आधुनिकता के कुछ वर्षों में लेखक व लेखिकाओं के द्वारा किए गए चिंतन, सृजन लेखन से तथा स्वयं स्त्रियों ने खुद के बारे में लिखा, सोचा, रचा। बहुत बार दुःख और प्रतिक्रिया में, यह इतिहास के अंधेरे युगों में खोए वजूद को तलाशने का प्रयत्न था ताकि जिन्दगी अर्थ पा सके। पृथ्वी पर स्त्री का होना सहज–स्वभाविक हो सके।

शोध पत्र का संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार है:
डॉ0 श्रवण कुमार,
"स्त्री की संवेदना से चिंतित समकालीन कविता"
शोध मंथन,
सितम्बर 2017,
पेज सं0 77–84
http://anubooks.com/?page_id=581
Artcile No.13 (SM 451)

स्त्री की संवेदना से चिंतित समकालीन कविता

डॉ0 श्रवण कुमार

हमारा समाज सदियो से पुरूष प्रधान समाज रहा है। यहाँ पुरूषों की विचारधारा समाज की बुनियाद मानी जाती है। हिन्दी भाशा के प्राध्यापक डॉ. दिलीप पाण्डेय स्त्री–विमर्श की प्रारम्भिक अवस्था पर प्रकाश डालते हुए लिखते है कि–''सन 1960 से सन 1975 का समय देश–विदेश में नारी मुक्ति का समय रहा है। सन 1975 में पहली बार महिला वर्ष मनाया गया, भारत में नारी–मुक्ति आन्दोलन यूरोप के 'वूमेन लिब मूवमेन्ट' की देन था, जिसके सामाजिक प्रभावों को समाज और हिन्दी साहिज्य में स्त्री–विमर्श के रूप में अभिव्यक्ति मिली।''[1] समकालीन काव्य में स्त्री–विमर्श कोई सहज–सरल और एकांगी विमर्श नहीं है, अपितु इसकी कई परतें हैं। आधुनिक हिन्दी कविता के शब्द–शिल्पी कैलाश वाजपेयी की कविता 'आर्य' में कवि ने पुरूष प्रधान समाज में स्त्री की स्थिति का रूप उदघाटित कर भारतीय समाज को आईना दिखाने का कार्य किया है–

''वह कपडे धोती है
धान उगाती है
मीलों दूर से पानी लाती है।
चारा देती है गायों को,
चरखा चलाती है
वह खानों कारखानों में जाती है कोयला,रेत ढ़ोने
नौकरी करके
हाथ बटाती
हर सुख–दुख में सब का
फिर ब्याह दी जाती है
आंकडे बताते हैं
पिछले वर्षों में
हमने पच्चीस लाख बहुएं जलाईं हैं
आप ही तय करे
हम आर्य हैं या कसाई।''[2]

पुराने जमाने के विचारकों ने कहा था– ''स्त्री सभी समस्याओं का मूल है, दार्शनिकों ने माना कि वह माया और अंधकार है। रूप का उपासक बोल उठा– स्त्री समस्त सौन्दर्य का सार है। सामाजिकों ने कहा– ममता, करुणा, जीवन रस है। इतने शब्द, इतने विचार पर सब अधुरे हैं। इतिहास के पन्ने को परे कर इक्कीसवीं सदी में मैत्रेयी पुष्पा ने कहा है कि–''वह अनया है, द्वितीयक है। वह जो कुछ है, वह है नहीं, उसे बनाया गया है। उसका सांचे में ढाल दिया गया अस्तित्व, पुरुष के इतिहास की उत्पत्ति है। यह स्त्री की पराधीनता का इतिहास है। इस इतिहास को फिर से लिखना होगा।''[3]

भारतीय समाज में यदि एक आदमी औरत को माँ या बहन के रूप में देखता है तो, उस औरत का सम्मान बढ़ जाता है और वह पुजनीय हो जाती है। यदि व्यक्ति उसी औरत कों वासना की नजर से देखता है तो उसमें उसे प्रेमिका, पत्नी, वैश्या नजर आती है। परन्तु यदि औरत स्वइच्छा से किसी पुरुष के प्रति आकर्षित हो जाती है, तो उस औरत को पुरुश समाज कुल्टा, बदचलन, वैश्या जैसे शब्दों से संबोधित करना शुरू कर देता है। साहित्य समाज का दर्पण जो ठहरा। इसलिए भारतीय साहित्य भी स्त्री–विमर्श अछूता न रह सका। समकालीन कविता आम आदमी की कविता है जो स्वार्थी मनुष्यता को बेबाकी ढंग से उजागर करती है। विशेषकर स्त्रियों के लिए कैलाश वाजपेयी ने अपनी कविता के माध्यम से कहा भी है–

''नारी उपस्थित है तब भी समस्या है
अनुपस्थित है तब भी समस्या है।''[4]

नारी की इसी उपस्थिति व अनुपस्थिति ने जहाँ समकालीन कविता में स्त्री–विमर्श को जन्म दिया, वही पुरूष प्रधान समाज को स्त्री का दैवीय रूप दिखाकर समय–समय पर सचेत भी किया है समाज सेविका अनिता महाजन ने अपने एक लेख में पुरूष प्रधान समाज को निर्देशित करते हुए लिखा है–''अगर आपके मन में स्त्रियों के प्रति अच्छी छवि है तो वह किसी भी परिधान में हो, आपको अश्लील नहीं लगेगी लेकिन आपका नजरिया ही ठीक नहीं हो तो वह किसी भी परिधान में हो अश्लील लगेगी। पुरूष साड़ी पुरूष साड़ी का गुनगान इसलिए नहीं करते कि इससे स्त्रियों की शालीन छवि उभरती है, अपितु वे साड़ी का पक्ष इसलिए लेते हैं क्योंकि यह नारी के शरीर को स्वछन्द गति को रोककर रखने में समर्थ है।''[5] इसी देह मुक्ति के संघर्ष और संस्कारों से स्त्री–विमर्श का व्याकरण तैयार हुआ है। दुनियाभर में पढ़ी जाने वाली जानी–मानी लेखिका तसलीमा नसरीन ने धार्मिक कट्टरपंथ और समाज में महिलाओं, खासकर दक्षिण एशियाई महिलाओं की दयनीय स्थिति के बारे में खूब लिखा है। उनकी कविताओं में बडी बेबाकी से स्त्री–जीवन का चित्रण किया है। तसलीमा आज की महिलाओं में आजादी की एक बुलंद आवाज है। उन्होंने अपनी स्त्री–पीड़ा को कविता के माध्यम से कुछ इस प्रकार से प्रकट किया है–

''जितना दुख–संताप लेकर एक इंसान बनता है स्त्री,
उतने ही दुख–संताप से स्त्री हो पाती है कवि।
एक शब्द के बनने में लगता है लंबी यंत्रणा का एक वर्ष,
और, एक कविता लेती है पूरी एक जिंदगी।
स्त्री जिस दिन कवि होती है, उस दिन होती है वह पूरी स्त्री
उस दिन वह पीड़ा की कोख से शब्द प्रसव करने में होती है सिद्ध।
कविता को जन्म देने के लिए पहले होना होता है स्त्री
यत्रणा के बगैर जो शब्द जनमते हैं छूते ही बिला जाते है

और स्त्री से ज्यादा भला कौन जानता है यंत्रणा के ताप को।''[6]

समकालीन कविता के कवियों ने श्रृंगार, प्रेम और काम की प्रतिष्ठा वायवीय कल्पना और सौन्दर्यलोक के धरातल पर नहीं की है। उनकी कविताएं जमीनी स्तर पर ही पाई जाती है। काम और प्रेम की उष्णता और उत्तेजना तथा अंग षिथिलता समकालीन कविता की विशेषता है। डॉ. नामवर सिंह ने ठीक ही लिखा है कि–''अंतर इतना ही था कि रीतिकालीन कवि जिन बातों को निधड़क कह देता था, द्विवेदी युग का कवि उन्हें मन नही मन दबा लेता था, रीतिकाल में स्त्री सुधार का कोई आंदोलन नहीं हुआ इसलिए उन उन कवियों पर कोई अंकुश न था, परन्तु आधुनिक काव्य में रूढ़ियों के विरूद्ध नवीन प्रक्रिया शुरू हो गई।''[7] निश्चय ही समकालीन कवि जगदीश चतुर्वेदी की कविता में इस परिवर्तन को देखा जा सकता है।

''युवतियों को देखकर मुस्कुराता हूँ
उनके स्तनों को अपनी हथेलियों में महसूस करता हूँ
उनकी रॉनों, पसलियों, नंगी बाँहों को
एक इमेज सा अपने में बाँध लेता हूँ
पर जब कोई स्त्री मुझें देखकर मुस्कुराती है
मुझें लगता है मेरे अवयव गल गए हैं।''[8]

प्रेम और काम का स्तर समकालीन कविता में गिरता हुआ दिखाई देता है। दिखाई देती है तो स्त्री की भोग कामना ही दिखाई पड़ती है। श्रीकांत वर्मा की कविता में काम ओर प्रेम का गिरता स्तर ध्यान देने योग्य है–

''गुफा की देहरी पर बार–बार
आ आकर
दहाड़ता है सिंह
बाज मारता है
एक के बाद एक सैकड़ों झपट्टे
ले उड़ता है कानों के फूल
नक की नथ, हाथ की चुड़ियां
वक्ष की कंचुकी, कमर का लहँगा
और आँखों की शर्म।''[9]

सहानुभूति, दया, त्याग सालों से ये गुण स्त्री के पर्याय बना दिए गए हैं। बिल्कुल चेहरे पर लगने वाले मेकअप की तरह। इसी सब के चलते नब्बे के दशक तक स्त्री की दुनिया भरी रही ऊबड़–खाबड़ रास्तों से और पुरूष खोजता रहा नई दुनिया। 'एक स्त्री सिसकती है' नामक कविता में मंगलेश डबराल ने स्त्री के हित में उठे नारीवाद की फड़फड़ाहट को महसूस ही नहीं करते अपितु जीवंत रूप में प्रस्तुत करते हैं।

''एक आदमी के पीछे
चुपचाप एक स्त्री चलती है
उसके पैरों के निशान पर
अपने पैर रखती हुई
रास्ते भर नहीं उठाती निगाह
किसी चट्टान के पीछे
सन्नाटे में एकाएक
एक स्त्री सिसकती है
अपनी युवावस्था में
अगले ही दिन आने वाले
बुढ़ापे से बेखबर।''[10]

स्त्री से सदा ही अपेक्षा करता रहा है पुरूष की वो अपनी संतुष्टि घर में ही ढूंढेगी। पति उसे खाना कपड़ा मुहैया कराएगा और बेटा बुढ़ापे में देखभाल करेगा। मानो सभ्यता की सफलता इसी पर टिकी है, लेकिन हकीकत ये है कि न तो पति उसे खाना कपड़ा देने में दिलचस्पी लेता है और बुढ़ापे में पुत्र जब चाहे तब घर के बाहर फेंक देता है। कैसी अदभुत बात है कि वो कर्ता बनी, लेकिन नियंता नहीं।

समकालीन कविता की सजग कवियत्री रमणिका गुप्ता ने इसी चेतना रूप को अपनी 'आदमी की पसली' नामक कविता में खींचा हैं। कवियत्री ने कविता में नारी के आत्मनिर्भरता को ही अंकित किया है। आधुनिक स्त्री किसी पर भी अवलंबित नहीं रहना चाहती। वह स्वतन्त्र रूप से अपना जीवन निर्वाह करना चाहती है। समाज में अपना स्वयं का अस्तित्व अंकित करना चाहती है। जैसे–

''मैं मरूँगी भी नहीं
नहीं किसी को अपना गला घोंटने दूँगी
और न ही जिन्दा रहने का अहसास मानूँगी
किसी का बोझ नहीं बनूँगी
चूँकि मैं स्वयं बोझ बर्दाश्त करने की क्षमता रखती हूँ।''[11]

हरियाणा भारतीय संस्कृति का मूल केन्द्र है किन्तु खेद का विषय है कि हिन्दी के साहित्य इतिहासों में हरियाणा के प्राचीन एवं आधुनिक साहित्य के योगदान की ही होती रही है। ऐसे अनेक लेखक व रचनाकार है जो अपने लेखन के आधार पर सारे देश में जाने–पहचाने जाते हैं यथा–रोहिणी अग्रवाल, नरेश मिश्र, मनजीत राठी, श्याम सखा, सुधा जैन, जयबीर हुड्डा, हरीश कुमार, डॉ. प्रदीप शर्मा आदि हैं।

स्त्री की संवेदना से चिंतित समकालीन कविता

डॉ0 श्रवण कुमार

नारी चेतना की प्रमुख सरोकार व समकालीन कवियत्री डॉ0 मनजीत द्वारा रचित काव्य संग्रह 'जब कोई दस्तक देता है' में नारी के अस्तित्व, व उसके निजी 'स्पेस' को तलाशती कविताएं हैं। सभी कविताओं में मध्य प्रभावित होती महिला चेतना का स्वर स्पष्ट है। सम्भवतः इसका कारण कवियत्री की नारी आन्दोलनों, साक्षरता आन्दोलन तथा सांस्कृतिक आन्दोलन में सक्रिय भागीदारी का होना है। उन्होंने अपनी कविताओं के माध्यम से नारी को जागृत करने का सफल प्रयास किया है तथा उनको पुरा यकीन है कि एक दिन औरत अपना वर्चस्व स्वयं स्थापित करेगी–

''दिल में यकीन
आंखों में सपना
और हाथ में हाथ लिए
ये गांठे अब वह खुद ही खोलेगी
अपनी बात वह खुद ही बोलेगी।[12]

इन पंक्तियों के माध्यम से कवियत्री बताना चाहती है कि नारी अपने अस्तित्व को स्वयं स्थापित करेगी। 'प्यार की हसरत' नामक कविता में नारी संघर्षों से जूझते हुए अपने वर्चस्व को स्थापित करने का प्रयत्न कर रही है। यथा–

''तमाम हमलो
तमाम दुःखों
तमाम धोखों के बीच
आज भी कायम है
यही है सबसे बडा सबूत
औरत के होने का।[13]

उन्होंने अपनी कविताओं में ताकत की धूरी को पलटने की जिद और हर अन्धेरे को चीरती फैले आसमां तक को उजागर करने का प्रयास किया है। उनका मत है कि नारी दुखों से विचलित नहीं होती बल्कि दुखों से उपर उठती है।

राजेश जोशी की कविता 'एक दिन बोलेंगे पेड' में स्त्री अस्मिता संकट की भंयकरता स्पष्ट दिखाई देती है। पुरूष प्रधान समाज के प्रति स्त्री के मन में गहरी निराशा, असंतोष, अर्न्तद्वन्द्व,तनाव, असमंजस तथा आक्रोश है जो निश्चय ही उनकी कविताओं 'एक दिन बोलेंगे पेड़', 'मिटटी का चेहरा', 'चाँद की वर्तनी' आदि कविताओं में देखा जा सकता है।

''हजारों मील दूर
एक चिड़िया
पिंजरे के खिलाफ हवा के लिए लड़ रही है
एक काली चिड़िया।''[14]

इस कविता में चिड़िया प्रतीकात्मक ढंग से स्त्री व सर्वहारा की मुक्ति को प्रकट कर रही है। समकालीन कवितायें इस समय की जीवन्त समस्याओं को उठाती है। समकालीन कविता अपने वर्तमान से जुड़कर उसकी अभिव्यक्ति का माध्यम बनी है। समकालीन स्त्री जीवन के विभिन्न पक्षों–पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक, नैतिक, राजनीतिक आदि में व्याप्त विशमताओं को व्यंग्यात्मक शैली में रमेश रंजन ने 'मिटटी बोलती है' में लिखा है–

''देहरी मत लांघ जाना तुम,
धूप ने कर्फ्यू लगाया है।''[15]

समकालीन कविता में स्त्री की पीड़ा, शोषण, अन्याय, भ्रष्टाचार, अव्यवस्था और विद्रोह स्पष्ट परिलक्षित होता है। समकालीन रचनाकारों के विषय में गणपति चन्द्रगुप्त लिखते हैं–''कविता उनके लिए केवल आत्मदर्शन एवं आत्म विज्ञापन का साधन नहीं है। अपितु वे उसके माध्यम से अपने युग और समाज को संघर्ष एवं विद्रोह की प्रेरणा देकर क्रान्ति का आहवान करना चाहते हैं।''[15]

निष्कर्षतः समकालीन कविता स्त्री चेतना की अर्थपूर्ण अभिव्यक्ति का श्रेष्ठतम रूप है। जीवन के गहन से गहन पहुलओं तक उसकी व्याप्ति है। इसलिए जीवन की अतल गहराइयों में होने वाले परिवर्तनों की छाया साहित्य में सबसे पहले कविता पर ही पड़ती है। युग–मानस के सूक्ष्मतम आवर्तनों–विवर्तनों का परिचय शब्दों अर्थों, भावों और विचारों के नये संतुलन से मिलता है। समकालीन कविता ऐसे प्रत्येक संतुलन के साथ नयी होती जा रही है। आज जो संतुलन घटित हो रहा है वह अब तक होने वाले संतुलनों की अपेक्षा अधिक तलस्पर्शी, अधिक मौलिक है क्योंकि मानव–व्यक्ति को इतना अधिक महत्व किसी युग में नहीं मिला और न उसके आगे मानवता के सामूहिक निर्माण और विनाश का प्रश्न ही इससे अधिक उग्र होकर आया। कैलाश वाजपेयी ने अपनी कविता में लिखा भी है कि–

''न हमारी आँखे हैं आत्मरत
न हमारे होठों पर शोकगीत
जितना कुछ ऊब सके ऊब लिये
हमें अब किसी भी व्यवस्था में ड़ाल दो जी जायेंगे।''[16]

इस तरह स्पष्टः कहा जा सकता है कि समकालीन कविता और कवियों में स्त्री चेतना का स्वर विद्यमान है किन्तु इनके पास कोई विधेयात्मक विकल्प नहीं है।

सन्दर्भ सूची

1. ***अहा जिन्दगी*** *(मासिक पत्रिका, मार्च 2012), स्त्री अंक, पृष्ठ –15*
2. हवा में हस्ताक्षर–कैलाश वाजपेयी, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, पृष्ठ–20
3. ***अहा जिन्दगी*** *(मासिक पत्रिका, मार्च 2012), स्त्री अंक, पृष्ठ –67*
4. चुनी हुई कविताएं– कैलाश वाजपेयी, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, पृष्ठ –4

5. अमर उजाला (दैनिक समाचार पत्र, 4 मार्च 2011), पृष्ठ –14
6. वाड़्मय (त्रैमासिक हिन्दी पत्रिका, अप्रैल 2012), पृष्ठ –97
7. कविता के नए प्रतिमान–नामवर सिंह, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ –29
8. वाड़्मय (त्रैमासिक हिन्दी पत्रिका, अप्रैल 2012), पृष्ठ –106
9. नयी कविता की चिंतन भूमि–डॉ.ऊषा कुमारी,वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ –62
***10. अहा जिन्दगी** (साहित्य महाविशेषांक 2013), पृष्ठ 141*
11. आदम की पसली–रमणिका गुप्ता, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ –264
12. मुझे नहीं चाहिए चांद–डॉ. मनजीत राठी, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ –50
13. मुझे नहीं चाहिए चांद–डॉ. मनजीत राठी, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ –75
14. एक दिन बोलेंगे पेड़–राजेश जोशी, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, पृष्ठ –27
15. मिटटी बोलती है–रमेश रंजन, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, पृष्ठ –23
16. परास्त बुद्धिजीवी का वक्तव्य–कैलाश वाजपेयी, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नयी दिल्ली, पृष्ठ –19